International Journal of Advanced Research and Development
ISSN: 2455-4030
Impact Factor: RJIF 5.24
www.advancedjournal.com
Volume 3; Issue 3; May 2018; Page No. 125-126

हिन्दी साहित्य और आलोचना की चुनौतियाँ

डॉ0 नीतू शर्मा
एसोसिएट प्रोफेसर–हिन्दी, आई0टी0 पी0जी0 कॉलेज, लखनऊ

सारांश
साहित्य, 'कला', 'मनोरंजन', सौन्दर्यानुभूति' 'रस प्राप्ति' इनमें से किसी एक की सिद्धि के लिये नही है वरन 'कविता निजी व्यक्तित्व को महानतर व्यक्तित्व के लिये मिटाने की, निजी मन को सामूहिक मन में रूपान्तरित करने की क्रिया है इसी अर्थ में साहित्य की प्रकृति ही मानववादी है साहित्य रचना एक सांस्कृतिक प्रयास है जो परिवर्तन के हर नये दौर में नये मानव मूल्यों को रूपायित तथा व्यवस्थित करता है वह युगीन मानस को परिवर्तन की सीमाओं के साथ–साथ उसके ज्ञान और बोध को संवारता है।

मूल शब्द : कविता, आलोचना, पुनर्विचार, प्रतिमान।

प्रस्तावना

विक्टोरिया युग के प्रख्यात आलोचक मैथ्यू आरनाल्ड ने कहा था–
'कविता जीवन की आलोचना है' कविता को जीवन से जोड़ने का, उद्देश्य यह था कि दिनों दिन बढ़ती हुई वैज्ञानिकता के खतरे से साहित्य को बचाया जाए। साहित्य जीवन की व्याख्या नहीं करता है जीवन के समानान्तर एक जीवन निर्मित करता है, उसे अर्थवत्ता प्रदान करने के लिए नये रास्ते खोजता है। वह न केवल जीवन मूल्यों से प्रभावित होता है, बल्कि उसे प्रभावित भी करता है। जीवन मूल्य और कला मूल्य अलग–अलग नही होते। जीवन मूल्य के बदलते ही कला मूल्य भी खोखले होने लगते हैं हिन्दी कविता के पिछले दौर पर आलोचनात्मक दृष्टि डालने पर यह ज्ञात होता है कि एक समय था जब कर्मकाण्ड और पोंगा–पन्थी मुल्लाओं और पंडितो के खिलाफ कबीर ने उद्घोष किया। उन्होंने एक भक्त होते हुए भी एक जागरूक इन्सान की हैसियत से झूठ–फरेब और पाखण्ड की भर्त्सना की और सामाजिक रूढ़ियों एवं विकृतियों को दूर करने के लिये पुरातनपन्थी जकड़बन्दी से जन मानस को आजाद कराने के लिए, सीधी–सादी और प्रभावी भाषा में जनता से दूरगामी और गहरा सम्पर्क स्थापित किया। जब मुगल सल्तनत की ह्रासकारी मनोवृत्ति से हिन्दु संस्कृति विघटित होने लगी तब गोस्वामी तुलसीदास ने लोक कल्याण के लिए 'रामचरितमानस' की रचना। सामन्तीय परिवेश में केशव, बिहारी मतिराम, पद्माकर द्वारा व्यवस्थित रीतिवादी जीवन मूल्यों को ध्वस्त करने के लिये ही घनानन्द, ठाकुर और आलम जैसे कवि हुए थे एक अरसे से उपेक्षित पड़ी हुई राष्ट्रीय चेतना को जाग्रत करने और हिन्दी भाषा के उत्थान के लिये भारतेन्दु युग के कवियों लेखकों ने एक बार फिर आवश्यक कदम उठाया। इस सन्दर्भ में आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी जी का योगदान स्मरणीय है समय के बदलाव के साथ एक आदर्शवादी रौमैन्टिक भाव धारा फिर सामने आई जिसका नाम छायावाद पड़ा। इस काल में वैयक्तिक कल्पना और भावुकता को प्रश्रय मिला। 'छायावाद की धुरी वैयक्तिक थी जिसके वृत्त पर प्रयोगवाद का विकास हुआ और प्रतिक्रिया में प्रगतिवाद का। फलस्वरूप छायावादी जीवन मूल्यों और काव्य मूल्यों की व्यवस्था भंग हुई। व्यक्ति सत्य और रागात्मकता की जगह सामाजिक सत्य ने और स्वजिल भावुकता की जगह बौद्धिक यथार्थवादी दृष्टि ने ले ली। लेकिन इतिहास के बदलते सन्दर्भ में, अपनी–अपनी दिशा में विकास यात्रा की ये मंजिल तयकर लेने के बाद प्रगतिवाद और प्रयोगवाद दोनों खेमें टूटे और नई कविता सामने आई। नई कविता का स्वरूप प्रयोगवादी कविता से स्पष्ट हो चुका था। कविता के इस ऐतिहासिक दौर मे (कविता और अकविता) 'व्यक्तिवाद' और 'सामाजिकता' का द्वन्द्व बना रहा एक तरफ स्वतंत्रता की मांग होती रही दूसरी तरफ सामाजिक दायित्व की बुनियाद पक्की की जाती रही है।

नयी कविता ने अपने सर्वतोमुखी विकास में यह सिद्ध कर दिया कि पुरानी व्यवस्था और मूल्य अब अप्रासंगिक हो चुके हैं। इन विभिन्न युगों की कविताओं के सन्दर्भ में काव्य प्रतिमानों की परिवर्तन प्रक्रिया को बड़ी आसानी से समझा जा सकता है, क्योंकि उनमें परम्परा के प्रति लगाव भी है और विगत के प्रति आक्रोश भी है। विगत के प्रति उनका संघर्ष रचनात्मक है। इस रचनात्मकता में पुरातन और नवीन का द्वन्द्व है। सामाजिक परिस्थितियों से उपजा हुआ तनाव। इस तनाव को मिटाने के लिये ही कविता के बदलते हुए रूपाकार और विषयवस्तु ने पुराने भाव बोध और शिल्प को छोड़ दिया था। इसलिये इस सन्दर्भ में नये प्रतिमानों की स्थापना और नये मूल्यों के लिये, नवीन सौन्दर्य बोध के स्तर पर पुनर्विचार आवश्यक हो गया है। यह पुनर्विचार ही नये प्रतिमानों की खोज और उनकी कल्पना में सहायक हुआ।

परिवर्तन बिन्दु–साहित्य की प्रकृति के बदलाव के साथ–साथ आलोचना की प्रकृति का बदलाव कई स्तरों पर देखा जा सकता है। युगीन परिवर्तन के साथ जीवन मूल्यों और क्रमशः सृजनात्मक गतिविधियों में भी बदलाव आता है। 'दृष्टि बोध और रूचि–ये तीनों काल सापेक्ष्य होकर परिवर्तित होते रहते है। इनके बदलने से कविता भी बदलती है–और जब कविता बदलती है तो उसके प्रतिमान भी बदल जाते है। आलोचना के मानदण्ड कविता के आधार पर ही निश्चित होते है लेकिन अपनी परम्परा से संशोधित और संस्कारित होकर क्योंकि कला–मूल्य एक विशेष मर्यादा के अन्तर्गत कलाकृति के भीतर ही होते है। किन्तु सौन्दर्य का वह अन्तरोदभुत अन्तर्जनित निकष निश्चित नियमित और नियन्त्रित होता है। किसी भी साहित्य शास्त्र का मूल्य भी वही है, जहाँ वह आस्वाद और इस बोध के अवधारण, विवेक के सराहना में सहायता

करता है, तथा अचेत का ग्रहण और अनुचित का त्याग, खरे का स्वागत और खोटे का तिरस्कार, महत्व की स्वीकृति और क्षुद्र की उपेक्षा द्वारा संभव बनती है। समीक्षा और उसके शास्त्र की यही उपयोगिता है।

समीक्षा अपने युगीन परिप्रेक्ष्य में स्वयं निर्मित होती है 'डॉ0 बच्चन सिंह के अनुसार ''साहित्य का बौद्धिक और समीक्षात्मक विश्लेषण ऐसी प्रक्रिया है, जिसमें कृति के सन्दर्भ में अद्‌भुत रचनात्मकता और मूल्यवत्ता प्राप्त करता है, जब समीक्षक कृति को उसके पूरे परिदृश्य में समझता और विश्लेषित करता है। इस कार्य में उसका समकालीन अनुभव और इतिहास बोध ही सहायता दे सकता है। इस प्रकार समीक्षा रचना की व्याख्या और विश्लेषण करने के साथ–साथ उसका मूल्य भी आंकती है। कविता युग के साहित्य से अनुकूलित और अनुशासित होती है और उसे अनुकूलित भी करती है' नये प्रतिमानों का निर्धारण उतना आसान नही, जितना सोचा जाता है, पिछले युग की समीक्षा दृष्टि और दृष्टिकोणों के बनने में उतनी कठिनाई नही थी, क्योंकि उनके पीछे एक विशाल संस्कृत–साहित्य शास्त्र था और रीतिकालीन मानव मूल्य थे। पिछले दौर के समीक्षकों ने उन्हें अपनी आवश्यकतानुसार ग्रहण किया और उन्हें विकसित करने में अपना महत्वपूर्ण योग दिया।

नवनिर्मित प्रतिमानों और उसके आधार पर विकसित नई आलोचनात्मक समझ केवल नई कृतियों की ही समीक्षा नही होती बल्कि उनसे पुरानी कृतियों का भी नये सिरे से आंकलन और मूल्यांकन होता है। डॉ0 देवी शंकर अवस्थी ने इसे 'आलोचना का दूसरा मुख्य दायित्व' कहा है। किसी युग के रचनात्मक साहित्य का आंकलन, तत्कालीन साहित्यिक प्रतिमानों के आधार पर किया जा सकता है, क्योंकि रचनात्मक समीक्षा साहित्य की सृजनशीलता से परिपूर्ण होती है। समीक्षक किसी भी कविता में निहित मूल्यों का आंकलन समग्र कविता के परिप्रेक्ष्य में करता है। महत्वपूर्ण कृति अपनी मूल्यवत्ता, अर्थवत्ता और चित्रात्मकता का असर डालती है। एक तरह से उसी के प्रतिमान समीक्षा के प्रतिमान बन जाते है। डॉ0 रामविलास शर्मा के शब्दों में समाज के समान साहित्य भी गति मूलक है और हम उसके प्रवाह को अगतिमूलक, जड़ अथवा अनैतिहासिक दृष्टिकोण से नहीं परख सकते। डॉ0 शर्मा के इस कथन को क्रिस्टाफर कॉडवेल के शब्दों में अगर कहा जाए तो साहित्य के रूप और मुहावरें में परिवर्तन का होना यह सूचित करता है कि सामाजिक परिवर्तन हो गया है। सामाजिक परिवर्तन के सन्दर्भ में साहित्य के रूपों और मुहावरों में हुए परिवर्तन की पहचान, समाज–शास्त्रीय आलोचना की देन है।

निष्कर्ष–नई समीक्षा के प्रतिमान नई कविता के आधार पर निर्मित किये गये हैं। उनकों पिछले युगों की कृतियों पर लागू करना और उनके आधार पर उनकी मूल्यवत्ता का विवेचन करना उसी तरह असफल सिद्ध हो सकता हैं जैसे पुराने प्रतिमानों के आधार पर नई कविता की मूल्यवत्ता का आंकलन नही हो सका। डॉ0 बच्चन सिंह का कथन है कि (नई) आलोचना के किसी एक प्रतिमान को सार्वभौम कहना एक मिथक की सृष्टि करने के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। ''यह बात किसी हद तक सच मानी जा सकती है, क्योंकि जिन प्रतिमानों को सार्वकालिक और सार्वभौम समझने की भूल कुछ आलोचकों ने की है, वे अपने 'अप्रोच' में कहीं–कहीं इतने कमजोर और बेजान हो गये कि उनकी अप्रांसगिकता से इनकार नहीं किया जा सकता।

आज के प्रसंग में जब कि साहित्य आम आदमी की जिन्दमी से निकटतर सम्बन्ध स्थापित करने को प्रतिबद्ध है, आलोचना मे उसकी कलानिष्ठता को तरजीह देना आज की सच्चाइयों को नजरअन्दाज करना होगा।

सन्दर्भ पुस्तक सूची

1. समीक्षा के नये प्रतिमान–डॉ0 अशोक द्विवेदी–पृ0 17 अनिल प्रकाशन इलाहाबाद–6
2. हिन्दी भाषा और साहित्य को आर्यसमाज की देन–डॉ0 लक्ष्मी नारायण गुप्त
3. वैश्विक संदर्भ में हिन्दीः समकालीन संवाद–प्रो0 रमेश चन्द त्रिपाठी
4. समकालीन कविता का परिप्रेक्ष्य–डॉ0 रेवती रमण–नवनीत प्रकाशन
5. समकालीन आलोचना–नलिनी उपाध्याय–मधु माधवी प्रकाशन
6. आधुनिक हिन्दी काव्य में समाज–डॉ0 गायत्री वैश्य–रंजन प्रकाशन
7. हिन्दी समीक्षा स्वरूप और सन्दर्भ–डॉ0 रामदरश मिश्र–दि मैकमिलन कंपनी आफ इण्डिया लिमिटेड।